हरियाणा में आहार परंपरा

–रणबीर सिंह

हरियाणा में खान–पान की संस्कृति के क्रमिक विकास की दास्तान यहां के घरेलू पालतू पशुओं और वनस्पति के अलावा मानवीय कौशल से जुड़ी हुई है। गंगा और सिंधु के विशाल और उपजाऊ मैदान में स्थित इस भू–भाग की भौगोलिक स्थिति, वर्षा का अनुपात और औसत वर्षा, मिट्टी की अनेक किस्में और वानस्पतिक विविधता की वजह से वर्तमान हरियाणा में पशुपालन और खेती के अलावा देशी फलों एवं सब्जियों की पैदावार के लिये उत्तम अवस्थाएं उपलब्ध रही हैं। हरियाणा में आदिकाल से ही मनुष्यों का आहार पशुओं से प्राप्त होने वाले दूध, दुग्ध पदार्थों, खेत में उपजने वाले अनेक प्रकार के अन्न, सब्जियों और फलों पर आधारित रहा है। इसकी वजह से प्रदेश के लोग बलशाली और स्वस्थ रहते आये हैं जिससे वे अपने दैनंदिन कार्यों को पूरी क्षमता से कर पाते हैं। प्रदेश में चारों ऋतुओं –गर्मी, बरसात, पतझड़ और शिशिर एवं शीत के अनुकूल खाद्य सामग्री का क्रमिक तौर पर विकास हुआ जो एक परंपरा के रूप में आज भी बना हुआ है।

हरियाणा में धातु युग, हड़प्पा काल, वैदिक, सनातनी और महाभारत के युगों से लेकर आधुनिक युग तक लोगों के खान–पान की किस्म और आदतों में परिवर्तन होता रहा है लेकिन आज भी यहां की मूल खाद्य सामग्री, इसके प्रसंस्करण की विधियां, भोजन तैयार करने के तौर–तरीके और परोसने की संस्कृति में विशेष बदलाव नहीं आया है। हरियाणा में आज भी सुबह के भोजन को 'कलेवा', दोपहर के भोजन को 'ज्वारा' और 'छोड़' तथा रात्रिकालीन भोजन को 'रात का खाणा' कहा जाता है। इसे यदि किसान परिवार के संदर्भ में देखा जाये तो उचित होगा। विगत में मूल रूप से हरियाणा में रहने वाले लोगों की खाद्य सामग्री और इसके इस्तेमाल से संबंधित कुछ जानकारी पुरातात्विक महत्व के टीलों की खुदायी से प्राप्त हुई है। इस संबंध में बहुत सी जानकारी हमें शास्त्रीय स्रोतों से भी उपलब्ध होती है जिसमें आयुर्वेद प्रमुख है। हरियाणा के लोगों की मौलिक और स्थानीय खाद्य सामग्री में नयी सामग्री का शुमार होने और इसके प्रसंस्करण की अनेक विदेशी विधियों के आगमन के लिये हम उत्तर–पूर्व से आयी मुस्लिम धर्मावलंबी जातियों और यूरोपीय मूल की जातियों जैसे कि अंग्रेजों का नाम ले सकते हैं। आधुनिक युग में खाद्य सामग्री के परंपरागत स्रोतों से नयी औद्योगिक खाद्य प्रसंस्करण पद्धतियों के आगमन से हरियाणा के लोगों की पारंपरिक खुराक में नयी खाद्य सामग्री भी जुड़ी है लेकिन मौलिक खाद्य सामग्री की किस्म, संरचना और इसे ग्रहण करने के रीति–रिवाज और आदतें अभी बरकरार हैं।

दूध एवं दुग्ध–उत्पादः

हरियाणा के अधिकतर लोग परंपरा से ही शाकाहारी रहे हैं। यहां के लोगों के आहार के क्रमशः विकास का अध्ययन अत्यंत रोचक है। यहां के लोगों द्वारा मुख्य रूप से पालतू पशुओं में से गाय और भैंस के दूध और इनके दूध से बने हुए उत्पादों का प्रयोग किया जाता है। दूध को कई और अन्नों के साथ विशेष रीति से मिलाकर भी भोज्य पदार्थ तैयार किये जाते हैं। कुछ समुदायों द्वारा प्रदेश में बकरी, भेड़ और ऊंटनी के दूध का भी कुछ मात्रा में प्रयोग किया जाता है। पारंपरिक रूप से कच्चा और पक्का दोनों तरह से दूध का सेवन सीधा ही अथवा मीठा डालकर यहां के लोग आदिकाल से करते रहे हैं। दूध में कच्ची और पक्की शक्कर अथवा खांड मिलाकर इसे मीठा किया जाता है। रासायनिक संरचना से ज्ञात हुआ है कि दूध संपूर्ण

आहार है। हजारों वर्षों से दूध के पोषक एवं चिकित्सीय गुणों का हरियाणा वासियों को ज्ञान रहा है। यह न केवल भूख और प्यास को शांत करता है अपितु रोगग्रस्त व्यक्ति में जीवन का संचार करने के लिये संपूर्ण और सुपाच्य आहार के रूप में सहस्रों वर्षों से प्रयोग किया जाता रहा है। दूध में मुख्य रूप से पानी, कैल्शियम और वसा होते हैं। इनके अलावा इसमें प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स, लवण और सूक्ष्मात्रिक रूप में विटामिन, जैसे कि राइबोफ्लेविन्स, होते हैं। राइबोफ्लेविन्स की मात्रा गाय के दूध में भैंस के दूध की अपेक्षा ज्यादा होती है। यह तत्व कैंसर रोधी पाया गया है। इसी प्रकार भैंस के दूध में वसा की मात्रा ज्यादा होती है। पालतू पशुओं के दूध में विभिन्न पोषक तत्वों की मात्रा उस द्वारा सेवन किये गये आहार की गुणवत्ता और मात्रा पर निर्भर करती है। मानव शरीर की उपापचयी प्रक्रिया के दौरान इन पोषक तत्वों के अवशोषण की दर और मात्रा का मानव स्वास्थ्य पर विभिन्न प्रकार से प्रभाव पड़ता है। दूध से उपलब्ध पोषक तत्वों –जैसे कि कैल्शियम, की भूमिका हड्डियों के निर्माण और वृद्धि एवं उपचार में सहायक होती है। इसी प्रकार वसा और कार्बोहाइड्रेस्ट्स से मानव शरीर को ऊर्जा की प्राप्ति होती है। कोशिकाओं के निर्माण और मरम्मत में प्रोटीन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इसी प्रकार वसा से कोशिका के ऊपरि आवरण को बनाने में भूमिका का पता लगाया गया है। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण और अदृश्य भूमिका राइबोफ्लेविन्स की होती है जिसकी वजह से आदमी में चौकन्नापन्न और चुस्ती बनी रहती है। राइबोफ्लेविन्स की वजह से शरीर में शरीर का स्नायुतंत्र ठीक तरह से काम करता रहता है। सामान्य आहार से प्राप्त पोषक तत्वों के मामले में हरियाणा की स्थिति भारतीय गणराज्य संघ के अन्य राज्यों के मुकाबले में काफी उत्साहवृर्द्धक कही जा सकती है। लेकिन सूक्ष्मात्रिक पोषक तत्वों जैसे कि लौह, विटामिन, आयोडीन, फोलिक एसिड, थायामीन, बी–समूह के विटामिन, विटामिन 'ए', 'सी' और 'डी' तथा फासफोरस, जस्ता, तांबा, क्रोमियम, मैगनीज, नियासिन और फ्लोराइड के मामले में स्थिति चिंताजनक है। इसे दूध और अन्य हरी तथा पत्तेदार शाक–सब्जियों के सेवन से पूरा किया जाता है। लेकिन बच्चों के लिये तो ये तत्व दूध से ही प्राप्त किये जाने श्रेयस्कर होते हैं। पशुओं का दूध मानव आहार का महत्वपूर्ण घटक है और बच्चों की शारीरिक और मानसिक वृद्धि के लिये उसे उपयुक्त माना गया है। मनुष्य माता जब बीमार अथवा कमजोर हो तो शिशु को स्तनपान से अपना दूध पिलाने में अक्षम होती है। तब उसके शिशु को गाय का ही दूध दिया जाता है। कहा भी गया है कि गाय और माता का दूध एक जैसा होता है। लेकिन पालतू पशु से प्राप्त दूध को अच्छी तरह उबाल कर पीना ठीक रहता है क्योंकि पशुओं से प्राप्त दूध में अनेक प्रकार के कृमि और जीवाणु पाये जाते हैं जो कि मानव को रोगग्रस्त बना सकते हैं।

दूध एक ऐसा प्राकृतिक पेय है जिसे हरियाणा के लोग बहुत पसंद करते हैं और इससे तरह–तरह के स्वादिष्ट खाद्यान्न बनाये जाते हैं। दूध से क्षीर अथवा खीर जैसा स्वादिष्ट पकवान बनाने की हरियाणा में सहस्रों वर्ष पुरानी परंपरा है। ऐसा पकवान त्यौहार या उत्सव के दिन अथवा विशेष अतिथि की सेवा हेतु तैयार किया जाता है। यह बहुत पौष्टिक होता है तथा स्वाद बढाने के लिये इसमें अनेक प्रकार के मेवा फलों के सूखे बीज जिनमें कि प्रोटीन, वसा और कार्बोहाइड्रेट्स काफी मात्रा में होते हैं, रंधने के दौरान ही मिला दिये जाते हैं। दूध को उबाल कर इससे 'खोया' प्राप्त किया जाता है जिसका उपयोग अनेक तरह के मिष्टान्न जैसे कि बरफी और पेड़ा, बनाने में किया जाता है।

दूध से बनी हुई दही हरियाणा वासियों के आहार का मूल स्रोत रही है। दूध से दही बनने की प्रक्रिया 'लैक्टोबैसिलस' नाम के सूक्ष्मजीवाणु की सक्रियता से पूरी होती है। दही में अनेक प्रकार के पोषक तत्व होते हैं जिनसे उदर के कई विकारों से बचाव होता है। यह सुपाच्य, रोगनिरोधक और सह–भोज्य के रूप में स्वाद में इजाफा करने के गुणों से भरपूर होती है। दही में कुछ प्रकार की वनस्पति के पत्तों, जैसे कि

बथुआ और पालक, को उबाल कर डालने या कुछ प्रकार की उबली हुई सब्जियों जैसे कि घीया, गाजर, आलू और कच्चे तौर पर खीरा और ककड़ी आदि डालकर रायता बनाया जाता है जिसका सेवन हरियाणा के लोग सदियों से करते आये हैं। हरी, पत्तेदार सब्जियों से तैयार रायता मनुष्य शरीर में आवश्यक मात्रा में लौह–तत्व पहुंचाता है। रायता में तुलसी (*ओसीमम सैंक्टम*) के पत्ते और भुने हुए जीरा का चूर्ण डालने से उसे स्वादिष्ट और सुपाच्य बनाया जाता है। दही को बिलोकर इसमें से मक्खन अथवा 'टिण्डी वाला घी' निकालने की परंपरा हरियाणा में सहस्रों वर्ष पुरानी है। बालक कृष्ण के लिये माखनचोर नाम भी इसीलिये पड़ा कि मक्खन उनका अत्यंत प्रिय आहार था। मक्खन को, खासतौर पर गाय के दूध से बनी दही से प्राप्त, हरियाणा में आयुर्वेदिक औषधियां तैयार करने के लिये भी प्रयोग किया जाता रहा है। वैसे तो हरियाणा के लोग नाश्ते में कुछ और आहार लेते हैं लेकिन कहीं–कहीं प्रातःकाल के नाश्ते में दही के साथ जलेबियां भी स्वीकार्य हैं।

हरियाणा में आहार के लिये प्रयुक्त होने वाले अन्नों में गेहूं, चना और बाजरा प्रमुख हैं। यहां के लोग अल्प मात्रा में, ऋतु और अवसरानुकूल मक्का और जौ का भी प्रयोग करते हैं। गेहूं और चना का उपयोग बारहों मास और प्रत्येक ऋतु में किया जाता है जबकि बाजरा और मक्का, जो कि खरीफ की फसलों के तौर पर शिशिर ऋतु से पहले पक कर तैयार हो जाती हैं, का उपयोग शीत ऋतु में एक पोषक और ऊर्जा दायक आहार के रूप में किया जाता है। विशेष त्यौहारों पर व्रत के दौरान हरियाणा प्रदेश में महिलाएं कुट्टू के चूर्ण या आटे का सेवन करती हैं। इसे सिंघाड़ा जैसे जलफल से प्राप्त किया जाता है।

गेहूं से तैयार आहार

हरियाणा में अन्न को पका कर खाने की परंपरा रही है। लेकिन विशेष प्रयोजन के लिये पानी में भिगोया हुआ अन्न या साबुत अवस्था में उबला हुआ अन्न भी ग्रहण किया जाता है। गेहूं के दानों को पीसने से सामान्य आटा और मैदा तैयार किया जाता है। इनसे विभिन्न तरह के पारंपरिक पकवान तैयार किये जाते हैं परंतु समान्य रूप से हरियाणा के प्रत्येक घर में गेहूं के आटे से रोटी तैयार की जाती है जिसके सह–भोज्य के रूप में किसी प्रकार की शाक–सब्जी या दालों का उपयोग होता है। हरियाणा में बहुत से घरों में गेहूं के आटे से पराठे (स्टॅफ्ड ब्रेड) भी तैयार किये जाते हैं। रोटियां, या तो पारंपरिक चूल्हे पर अथवा तंदूर में सेंकी जाती हैं। गेहूं के दानों से दलिया भी तैयार होता है। आजकल तो फैक्ट्रियों में गेहूं के दानों का बारीक छिलका उतारे बिना जस का तस पीस कर 'दलिया' बनाया जाता है। लेकिन पारंपरिक पद्धति में गेहूं के दानों पर पहले पानी छिड़क कर कुछ समय के लिये छोड़ दिया जाता है ताकि उनके ऊपर का छिलका नरम हो जाये। तत्पश्चात इन्हें ऊखल में डालकर कूटा जाता है ताकि दाब, गति और घर्षण से पैदा होने वाले ताप से गेहूं के दानों से छिलका अलग हो जाये। फिर इसे 'पिछोड़' कर या तो हाथ की चक्की में दला जाता है अथवा ऊखल में ही कूट कर दानों को तब तक तोड़ कर छोटा किया जाता है जब तक कि उनका आमाप एक मिलिमीटर अथवा उससे थोड़ा कम न हो जाये। इस प्रकार तैयार 'दलिया' जब एक आहार के रूप में दूध अथवा पानी में उबाला जाता है तो वह बेहद स्वादिष्ट और पाचक भोज्य पदार्थ बन कर सामने आता है। दूध में उबाले गये दलिया को दूध डालकर खाया जाता है। दलिया में पकते समय एक चुटकी नमक डाल दें तो वह सुपाच्य हो जाता है। इसे रोगी व्यक्ति को भी आहार के रूप में दिया जाता है। पकते हुए दलिया में गुड़ डालने से वह मीठा और बेहद स्वादिष्ट बनने के अलावा पोषक तत्वों से संवृद्ध भी हो जाता है क्योंकि गुड़ में मौजूद प्रोटीन, लवण, कैल्शियम और फासफोरस भी इसमें शामिल हो जाते हैं।

हरियाणा वासियों का एक अन्य पारंपरिक भोजन गेहूं के आटे से तैयार राबड़ी है। इसे तैयार करने के लिये सामान्य से थोड़ा बारीक पिसे हुए आटे की आवश्यकता होती है। ग्रीष्म ऋतु में दिन में चौथे पहर जब वातावरण में तापमान थोड़ा कम हो जाये और घर में सुबह से ही मिट्टी के पात्र, जैसे कि बरोल्ली या बरोल्ले, में रखी हुई लस्सी या 'सीत' में स्वमेव ही थोड़ा खटास पैदा हो जाये तो उसमें आधा लिटर में अधिकतम 100 ग्राम आटे का अनुपात रखकर मिश्रण तैयार किया जाता है और सांयकाल तक अथवा चार–पांच घड़ी (एक घड़ी = 20 मिनट) तक मुंह पर कपड़ा बांध कर रख दिया जाता है ताकि इतनी अवधि के भीतर उसमें खमीर उठ जाये। तत्पश्चात इस तरल मिश्रण को धीमी आंच पर करीब आधा घंटा तक पका लिया जाता है। इसे ठंडा होने पर दूध के साथ मिलाकर खाया जाता है। इसे ही राबड़ी कहते हैं। रात की बची हुई राबड़ी का प्रातःकाल 'सीत' के साथ नाश्ते के रूप में पुनः सेवन कर लिया जाता है। यह अत्यंत पौष्टिक आहार है जिसमें खमीर की वजह से प्रोटीन की मात्रा में काफी इजाफा होता है। गर्मियों में, खासतौर पर जब 'लू' का प्रकोप हो तो सीत–राबड़ी का आहार शरीर को पोषण देने के अलावा ठंडा रखने में भी सहायक माना गया है। इसके सेवन से काफी समय तक प्यास की तीव्रता भी अनुभव नहीं होती।

देश में मुसलमानों के आगमन के बाद गेहूं के भुने हुए दानों और गुड़ के मेल से मुरमरे बनाने की परंपरा भी विकसित हुई जो आज तक कायम है। गेहूं के मोटे अन्न को भून कर इससे 'डोडा' और 'गूंदपाक' नाम की अतिस्वादिष्ट मिठायी बनायी जाती है।

गेहूं के आटे से प्राप्त मैदा एक ऐसा प्रसंस्करित खाद्य स्रोत है जिससे अनेक प्रकार के व्यंजन तैयार करने की संस्कृति का ही विकास हो गया। विशुद्ध मैदा के साथ मिश्रण के तौर पर अन्य प्रकार के अन्न या इसे किसी तरह की प्रसंकरण पद्धति से गुजारकर पारंपरिक तौर पर अनेक तरह के स्वादिष्ट खाद्यान्न जैसे कि बालूशाही, बरफी, घेवर और शक्करपारे बनाये जाते हैं लेकिन सूजी का हलुवा, चूरमा, कसार, सुहाली, पूड़े, गुलगुले और जलेबी, पूरी तथा कुछ समय से प्रचलन में आये कचौड़ी और भटूरे आदि का नाम न लिया जाये तो आहार की बात पूरी नहीं होती। गेहूं से तैयार सूजी का हलुवा हरियाणा के लोगों का प्रिय आहार रहा है जिसे किसी भी ऋतु में किसी भी समय के भोजन में शामिल किया जा सकता है।

विगत में हरियाणा के देहात में रहने वाले अनेक बलशाली पुरुष पांच सेर तक हलुवा एक बार में खाने का सामर्थ्य रखते थे। हलुवे को अनेक तरह के मेवों से सुगंधित और गरिष्ठ बनाया जाता है। खाने–पीने की आधुनिक दुकानों के खुलने से और आवागमन के त्वरित साधनों के प्रचलन से पहले न केवल पदयात्रा या बैलगाड़ी और रथ में यात्रा करते समय अपितु थोड़े समय के लिये खेत या जंगल में गये व्यक्तियों के लिये 'चूरमा' तैयार किया जाता था जो कि बहुत पौष्टिक होता है। कई पहर बीतने के बाद भी यह खराब नहीं होता बशर्ते इसमें देसी घी खूब डाला गया हो। हथेली पर घी अथवा पानी लगाकर चूल्हे पर सेंकी गई गेहूं के आटे से तैयार मोटी रोटी बना कर उसमें कुटा हुआ गुड़, खांड या पीले–लाल रंग की कच्ची शक्कर अच्छी तरह मिला कर घी में मसलने से उत्तम किस्म का 'चूरमा' तैयार होता है। यदि गेहूं को हाथ की चक्की से मोटा पीसा गया हो तो चूरमा अत्यंत नरम और स्वादिष्ट बनता है। गेहूं के मोटे आटे से 'लापसी' नामक आहार तैयार किया जाता है। आटे को भूनने के बाद इसमें गुड़ की पात मिलाकर 'रांधने' से 'लापसी' तैयार होती है जोकि बड़ी पौष्टिक और सुपाच्य होती है। इसमें घी नहीं मिलाया जाता। हरियाणा में कहीं–कहीं गेहूं के आटे से 'अंगाकड़े' तैयार करने का भी उपक्रम किया जाता था। आमतौर पर घुमक्कड़ जातियों और आबादी से काफी समय तक दूर रहने की स्थितियों में भ्रमणकर्ता, गेहूं के आटे से गोल बट्टियां

बनाकर अथवा थोड़ा दबाव देकर बहुत मोटी रोटी जैसी आकृति में ढालकर उसे आंच में सीधा ही डाल देते थे। इस तरह ऊपरि तौर पर तो यह ज्यादा भुन जाती थी लेकिन भीतर से यह पक कर खाने योग्य हो जाती जिसका सेवन करके लोग भूख मिटाते थे। एक रिवाज के तौर पर भी लोग इस परंपरा का निर्वाह करते रहे हैं।

गेहूं के मोटे आटे से बनाया गया 'कसार' जैसा आहार न केवल प्राचीन समय से हरियाणा के लोग तैयार करके सेवन करते रहे हैं बल्कि यह एक प्रकार का तुरत आहार भी है। इसे तैयार करने के लिये गेहूं के आटे को पहले धीमी आंच पर भून लिया जाता है। यदि इसमें बारीक, कुटा हुआ गुड़ डालना हो तो भुनने के अध–बीच डाला जाता है लेकिन यदि इसे बाद में खांड डालकर मीठा करना हो तो सिर्फ भून कर ठंडा कर लिया जाता है। खाते समय इसमें आवश्यकतानुसार खांड और घी डालना होता है। बहन की संतान के विवाह के समय 'भ्रातृ–पक्ष' से आये हुए अतिथियों को हरियाणा में 'कसार' ही परोसा जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह तुरत भोजन हरियाणा में आदिकाल से प्रचलित है। विवाह के समय मेहमानों को विदा के समय भेंट स्वरूप जो खाद्य–पदार्थ दिया जाता है उसमें 'कसार' और 'सुहाली' सर्वोपरि है। 'सुहाल़ी', कई दिनों तक खराब नहीं होती। चूंकि पुराने वक्तों में मेहमान लोग कई पहर तक या कई दिनों तक चलने के बाद अपने घर पहुंचा करते इसलिये रास्ते में खाये जा सकने वाले अन्न से बने भोज्य–पदार्थ के रूप में 'कसार' और 'सुहाल़ी' बनाने का आविष्कार हुआ होगा। आजकल मैदे से बनी हुई इसी पारंपरिक 'सुहाल़ी' ने 'मट्ठी' का रूप ले लिया है। 'सुहाल़ी' को बनाने के लिये गेहूं का मोटा पिसा हुआ आटा चाहिये जिसे गुड़ के शरबत और सरसों के तेल में गूंद कर हथेली जितने आकार की मोटी रोटी बना ली जाती है। तत्पश्चात इसे गर्म घी से भरी कड़ाही में तला जाता है ताकि यह पक कर गहरे लाल–भूरे रंग की हो जाये। यह सुपाच्य होती है। वर्षा ऋतु में हरियाणा के लोग गेहूं के आटे को गुड़ के शरबत में गूंद कर गुलगुले और पूड़े भी तैयार करते हैं। गुलगुलों के लिये तैयार आटा गाढ़ा लेकिन पूड़े के लिये पतला रखना पड़ता है। गुलगुलों को तो यूंही लेकिन पूड़े को अचार और घी मिली खाण्ड के साथ खाया जाता है। चौमासे और शीत ऋतु के लिये हरियाणा वासियों का एक अन्य प्रिय और पोषक आहार 'सेवियां' या 'सिवैय्यां' भी है। मशीनों के आगमन से पहले हरियाणा के लोग गेहूं के बहुत बारीक पिसे हुए आटे अथवा मैदे से सेवियां तैयार करते थे। इसे बनाने के लिये गेहूं के आटे को बहुत देर तक गूंद कर लोई या पिंडी बना ली जाती थी। फिर हाथ पर सरसों का तेल लगाकर इस लोई को उल्टकर रखे हुए मिट्टी के पात्र, जैसे कि घड़ा या मटका, पर रखकर हाथ के दबाव से बत्तीनुमा तार निकाले जाते थे। दो बालिश्त–भर की लंबाई का तार बढ़ने पर इसे लोई से अलग करके कैर की सूखी झाड़ी अथवा रस्सियों पर सूखने के लिये लटका दिया जाता था। इसी प्रकार लोई को छोटा–छोटा तोड़ कर उससे 'जोई' की आकृति जैसी रचनाएं बनायी जाती जिन्हें कपड़े पर सूखने के लिये डाला जाता था। जो नामक पौधे के बीजों सदृश होने से ही इन्हें 'जोई' ही कहा जाता है। सेवियां और जोई को वर्षाकाल में अन्न परिवर्तन के लिये और शीत ऋतु में घरेलू मिष्टान्न के रूप में खांड या बूरा डालकर खाया जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि हाथ से तैयार यह खाद्यान्न हरियाणा में मुस्लिम और मुगल युग की देन है क्योंकि पुराने वक्त के दस्तावेजों और शास्त्रों में इसका विवरण नहीं मिलता। 'पूरी' भी गेहूं के आटे से तैयार की जाती है। 'सुहाल़ी' और 'पूरी' में सिर्फ इतना फर्क है कि 'पूरी' का आटा नरम गूंदा जाता है जिसमें गुड़ का रस नहीं डाला जाता और इसे गर्म घी से भरी कड़ाही में पकाया भी इतनी देर के लिये जाता है कि यह सख्त न होने पाये।

चने से तैयार आहार

हरियाणा के लोगों के आहार में विकासक्रम से चने का भी महत्वपूर्ण स्थान रहा है। दक्षिणी हरियाणा के अर्द्ध–मरुस्थलीय क्षेत्रों में जहां कभी से ही अपेक्षाकृत कम वर्षा होती रही है, खेतीहर लोग चने के अलावा मोठ और मूंग दालों की उपज लेते रहे हैं। चना तो रबी की फसल है लेकिन मोठ और मूंग खरीफ की। इसलिये गेहूं की अपेक्षा ये अन्न दक्षिण हरियाणा के लोगों के पारंपरिक आहार का महत्वपूर्ण हिस्सा रहे हैं। पहले, इस क्षेत्र के अलावा मध्य हरियाणा के किसान गेहूं और चने की बिजायी इकट्ठी किया करते थे और 'गोचणी' के रूप में इसकी फसल लेते थे। पोषक तत्वों के मान के अनुसार चने में प्रोटीन और कैल्शियम की मात्रा गेहूं के मुकाबले में दोगुनी से भी ज्यादा है। इसीलिये आहार में चना खाने वाले लोग गेहूं खाने वाले लोगों के मुकाबले में ज्यादा क्षमतावान और पुष्ट होते हैं। हरियाणा के लोग चने का सेवन मुख्य रूप से आटे के रूप में करते रहे हैं। केवल चने के आटे से बनी हुई रोटी की अपेक्षा इसकी कुछ मात्रा –करीब एक तिहायी, को गेहूं के आटे के साथ मिलाकर 'मिस्सी रोटी' बनाने को तरजीह दी गई। इससे गेहूं की रोटी सुपाच्य और स्वादिष्ट बनती है। दूसरा तरीका यह था कि तुरत आहार के बतौर यहां के लोग साबुत चने को भड़भूजे से भुनवा लेते और इसे इसी रूप में अथवा गुड़ या नमक के साथ मिलाकर चबेने की तरह इस्तेमाल करते। इससे उनकी प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट्स और ऊर्जा संबंधी जरूरतों की पूर्ति हो जाती थी। सायंकाल होने पर भड़भूजा जब अपने भाड़ को जगाता था तो बच्चे झोली भर कर चने ले आते और भड़भूजे से भुनवा कर मजे से खाते। इसकी वजह से कुपोषण उनके पास भी नहीं फटकता था। अफसोस कि, भड़भूजों द्वारा अपने पांरपरिक हुनर को छोड़ देने से यह परंपरा अब विलुप्त–सी हो गई है। सदियों से हरियाणा में चने का इस्तेमाल तुरत आहार बनाने के लिये किया जाता रहा है। भुने हुए चनों को गुड़ के साथ कूटकर 'चणकुटी' नाम का जो आहार तैयार किया जाता है वह पौष्टिक और स्वादु होता है। इसे सफर में साथ रखा जाता है। इसी तरह चने से दाल बनाकर उससे बेसन बनाया जाता है। बेसन से 'बूंदी' बनाकर अथवा चने के आटे को घी में भूनकर जो लड्डू बनाये जाते हैं वे बेहद स्वाद और सुपाच्य होते हैं। हरियाणा में लड्डू बनाने की परंपरा पौराणिक काल से विद्यमान रही है। इस मिष्टान्न को त्यौहार, उत्सव और विवाह के मौके पर तो परोसा ही जाता है, देव–देवियों को भोग लगाने के लिये इसी का इस्तेमाल श्रेष्ठ समझा जाता है। बेसन से दाल–भुजिया बनाना तो इधर कुछ सौ साल पहले ही शुरू हुआ है, संभवतः मुस्लिम या इस्लामी काल में, लेकिन

भुजिया के साथ गुड़ की पात मिलाकर मुरमुरे बनाने का काम हरियाणा में किया जाता है जो कि बच्चों और बड़ों के लिये तुरत आहार सरीखा खाद्य पदार्थ है। हमारे यहां पारंपरिक तौर पर मुरमुरे तो नहीं लेकिन चने के आटे से पूड़े जरूर बनाये जाते रहे हैं जिन्हें दक्षिणी हरियाणा में सतपकवानी में भी गिना जाता है।

बाजरा से तैयार आहार

हरियाणा प्रदेश का दो–तिहायी भू–भाग अर्द्धशुष्क है और यहां वर्षा का औसत अनुपात भी कम ही है। इस क्षेत्र में सावनी अथवा खरीफ की फसल के तौर पर बाजरा की काश्त होती रही है जिसे लोगों ने अपने अन्न–आहार का मुख्य हिस्सा बनाया। बाजरे से कई तरह के पकवान यहां के लोगों ने कालांतर में विकसित किये तथा इसके सेवन के कई और तौर–तरीके भी निकाले। मुख्य तौर पर बाजरे को पीस कर आटा अथवा दूसरे प्रकार के भोज्य पदार्थ बनाने के लिये कूट या दल लिया जाता है। आटे से रोटी बनायी जाती है, कुटे हुए बाजरे से खिचड़ी और दले हुए से दलिया तैयार किया जाता है। बाजरे से भोजन तैयार करने से पहले इसे प्रसंस्करित करना पड़ता है। कालक्रम में हरियाणा की स्त्रियों ने दस्ती प्रसंस्करण विधियों का आविष्कार किया। अमूमन, बाजरे की खिचड़ी रात के भोजन के लिये तैयार की जाती है जिसकी तैयारी दिन के चौथे पहर शुरू हो जाती है। खिचड़ी बनाने के लिये बाजरे के दानों के ऊपर पहले हल्का सा पानी छिड़का जाता है। दो–तीन घड़ी का समय बीत जाने के बाद इन्हें ऊखल में डाल कर मूसल से कूटा जाता है। ऊखल में मूसल की चोट पड़ने से भीगे हुए दानों में गति और घर्षण से तापमान

हल्का सा बढ़ता है जिससे दानों से छिलका अलग हो जाता है। दानों को उस समय तक कूटा जाता है जब तक कि इनका आमाप एक मिलिमीटर या उससे छोटा न हो जाये। तत्पश्चात इन्हें छाज में 'पिछोड़' कर छिलकों को अलग कर दिया जाता है ताकि इसे उपयुक्त मात्रा में पानी के साथ पका कर खिचड़ी बनायी जा सके। यदि आटा बनाना है तो सूखे दानों को हाथ की चक्की में महीन पीसा जाता है और दलिया बनाना हो चक्की के ऊपरि पाट को थोड़ा उठा कर दानों को दो या तीन टुकड़ों में बदल लिया जाता है।

बाजारा अन्न से बनी रोटी, खिचड़ी और दलिया को सुपाच्य बनाने के लिये इसके साथ सह–भोज्य पदार्थों जैसे कि गोज्जी, दूध, हरा साग, रायता, चटनी, 'सीत' या दही से तैयार लस्सी और घी का होना जरूरी है। बाजारा, चूंकि शीत काल का प्रमुख भोजन है इसलिये इन दिनों खेतों में सरसों के पौधे और बथुए के पत्तों के मेल से हरा साग तैयार किया जा सकता है जिसे बाजरे की रोटी के साथ खाया जाता है। रोटी को अन्य किस्म के उपलब्ध शाक के साथ भी आराम से खाया जा सकता है। लेकिन बाजरे की रोटी को सुपाच्य और खाने योग्य बनाने के लिये उसे 'टिंडी' वाले घी अथवा मक्खन के साथ अथवा मक्खन से निकाले गये साफ घी से चुपड़कर खाया जाता है। खिचड़ी को यहां रूखा नहीं खाया जाता। चूंकि हरियाणा में पशुपालन की पुरानी परंपरा रही है इसलिये लगभग हरेक किसान के घर में गाय और भैंस का दूध और दूध से बने उत्पाद उपलब्ध होते हैं। सर्दियों में बाजरे की खिचड़ी को अमूमन 'गोज्जी' के साथ खाया जाता है। 'गोज्जी' का आविष्कार भी हरियाणा की एक उपलब्धि मानी जानी चाहिये। इसे लस्सी से तैयार किया जाता है। चूंकि सर्दियों में उपलब्ध वातावरणी तापमान कम होता है इसलिये मिट्टी के पात्र में रखा हुआ 'सीत' सांयकाल तक ज्यादा खट्टा नहीं होता। सांयकाल को जब दुधारू पशु का दूध निकाला जाता है तो इस पात्र में रखे हुए 'सीत' में सीधा ही पशु के थनों से निकले जा रहे ताजा और कच्चे दूध की धार मारी जाती है। अमूमन, इस प्रकार इसमें एक–तिहायी दूध की मात्रा का मिश्रण कर लिया जाता है। कुछ समय बाद यह मिश्रण एक प्रकार से खमीरयुक्त, गाढ़ा, भोज्य पेय बन जाता है जिसे बाजरे की खिचड़ी से मिलाकर खाने से वह गरिष्ठ और सुपाच्य बन जाता है। बाजरे की खिचड़ी को सुपाच्य और स्वादु बनाने के लिये इसमें पकाते समय एक–एक मुट्ठी चावल और चने या मूंग की दाल भी मिला दी जाती है। दूसरी ओर बाजरा से तैयार दलिया को केवल दूध के साथ ही खाया जाता है। बाजरे की खिचड़ी अथवा दलिया यदि रात के खाने के बाद बचा रहे तो इसे प्रातःकाल नाश्ते के रूप में उपयोग किया जाता है। बाजरे के दानों को 'बांट' के रूप में भी प्रयुक्त करने का रिवाज हरियाणा में रहा है। हरियाणा के दक्षिणी अंचलों में जहां इसकी फसल ज्यादा होती है, वहीं 'बांट' का रिवाज प्रचलित हुआ। संतान उत्पन्न करने के 42 दिन बाद जब 'जच्चा' को प्रथम बार घर से बाहर कुएं पर पानी ले जाने के लिये ले जाया जाता है तो उसे बाजरा की 'बांट' दी जाती है जिसे वह रास्ते में पनिहारिनों और अन्य लोगों को प्रसाद के रूप भेंट करती हुई चलती है। 'बांट' को तैयार करने के लिये बाजरे के दानों को गुड़ की शीरनी के साथ करीब दो–पहर तक भिगोया जाता है। विगत में प्रदेश में देसी बाजरा की काश्त हुआ करती लेकिन बाजरा की फसल पर कई प्रकार के रोग लगने से कृषि वैज्ञानिकों ने इसकी संकर नस्लें तैयार की हैं जिनकी काश्त अब ज्यादा होने लगी है। इससे बाजरे से तैयार आहारों की सुपाच्यता और स्वाद में कुद फर्क आया है लेकिन आज भी दक्षिणी हरियाणा में आश्विन मास में दशहरा उत्सव से लेकर फाल्गुन मास में होली का त्यौहार आने तक लोगों का प्रमुख आहार इसी से तैयार किया जाता है। बाजरे की रोटियों को टिंडी घी और कचरीयुक्त कढ़ी के साथ खाया जाये तो स्वाद निराला ही होता है।

बाजरा की फसल पक जाने पर इसकी बालियों को भून लिया जाता है और इनसे दाने निकालकर तुरत आहार के रूप में खाये जाते हैं। गेहूं की अपेक्षा बाजरा ज्यादा पौष्टिक होता है क्योंकि इसमें कैल्शियम और फासफोरस जैसे पोषक तत्वों का शुमार होता है। गेहूं के मुकाबले में बाजरा खाने वाले लोग अधिक बलिष्ठ और सक्षम होते हैं। परंपरा के तौर पर तो नहीं लेकिन शौकिया आहार के तौर पर हरियाणा के लोग मक्का का भी इस्तेमाल करते रहे हैं। मक्का का इस्तेमाल इसके आटे से रोटी बनाने में किया जाता है। पश्चिमी पाकिस्तान से हरियाणा में आये लोग और उत्तरी अंचलों में रहने वाले सिख समुदाय के लोग मक्का को

ज्यादा पसंद करते हैं। ये लोग मक्का के बीजों को उबाल कर इसे तुरत आहार के तौर पर प्रयोग करते हैं। बाजरे की तरह मक्का भी पौष्टिक होती है।

जौ और ज्वार से तैयार आहार

हरियाणा में आदिकाल से जौ की काश्त रबी की फसल के तौर पर और ज्वार की काश्त सावनी अथवा खरीफ की फसल के तौर पर होती रही है। ये फसलें ज्यादातर शीतकालीन और सावनी वर्षा पर निर्भर रहती हैं लेकिन नहर और कुओं के पानी से सिंचायी सुविधाएं उपलब्ध होने पर इन फसलों की बिजायी और बढवार के लिये पानी लगाया जाता है। इन्हें पशु–आहार या चारे के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। हरियाणा में विगत में गेहूं की खेती का रकबा ज्यादा नहीं होता था इसलिये लोग बाजरा, जौ और ज्वार को अन्न के रूप में प्रयुक्त करते थे। यह किसानों और गरीबों का भोजन भी होता था। जौ, काफी पौष्टिक होती है। गेहूं की अपेक्षा इसमें रेशा और कुछ पौष्टिक तत्वों की मात्रा ज्यादा होती है। सामान्य तौर पर स्वस्थ मनुष्यों के अलावा जौ से तैयार रोटी, खिचड़ी और अन्य आहार मधुमेहग्रस्त व्यक्तियों लिये विशेष फायदेमंद होते है। आयुर्वेद में जौ–अन्न से तैयार विशेष आहारों का उल्लेख मिलता है। दक्षिण हरियाणा में बसने वाले अहीर लोग जौ से 'घाअ्ट' नाम का एक आहार तैयार करते हैं। इसी तरह जौ के दानों को भिगोकर पूरी तरह सुखा लिया जाता है। फिर इसे भाड़ में भून कर 'घाणी' तैयार की जाती है जिसे चाव से खाया जाता है। इसी प्रकार विगत में ज्वार अन्न से तैयार रोटी हरियाणा के ग्राम्यांचलों में रहने वाले लोगों का प्रमुख आहार होता था। दस्तावेजों और स्मृति के आधार पर ऐसी जानकारी मिलती है कि अकाल के वक्त अथवा अल्पवृष्टि के दौर में जब अन्य प्रकार की फसलों की काश्त कम होती तो अन्न के रूप में ज्वार को इस्तेमाल किया जाता था।

चावल के आहार

हरियाणा में विगत में धान की काश्त इतनी भर होती थी कि त्यौहारों पर उबले चावल और खीर जैसे भोज्य पदार्थ तैयार किये जा सकें। दक्षिण भारत के राज्यों में बसने वाले लोगों ने धान की अनेक किस्मों से प्राप्त चावल का इस्तेमाल करके दर्जनों तरह के आहार तैयार करने में निपुणता हासिल की है। जिस तरह उत्तर–पश्चिमी भारत के राज्यों में गेहूं और बाजरा प्रमुख खाद्यान्न हैं उसी तरह दक्षिणी और उत्तर–पूर्वी राज्यों में चावल प्रमुख खाद्यान्न है। हरियाणा के लोग परंपरागत रूप में उबले हुए चावलों को बूरा, खांड और शक्कर में घी मिलाकर मिष्टान्न के रूप में ही ग्रहण करते हैं। चावलों को दूध में उबालकर बनायी गई खीर भी यहां के लोगों का प्रिय आहार है। इसे आमतौर पर मेहमान नवाजी और त्यौहारों पर विशेष भोजन के रूप में बना कर सेवन जाता है।

वर्तमान में वर्षा की अधिकता, सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि और भू–गर्भीय जल के ऊपर आ जाने तथा मिट्टी की गुणवत्ता में परिवर्तन होने से हरियाणा में धान की काश्त बहुत होने लगी है। सावनी फसल के रूप में हरियाणा की करीब दो–तिहायी कृषि–भूमि पर इन दिनों धान की काश्त होने लगी है। इससे हरियाणा वासियों के आहार में चावल का प्रयोग थोड़ा बढ़ा तो है लेकिन धान की ज्यादातर उपज को बाजार में बेच दिया जाता है जिसे अन्य राज्यों और विदेशों में भेजा जाता है। इससे लोगों की आमदनी में काफी इजाफा हुआ है।

अन्य अन्न एवं आहार

हरियाणा में खरीफ की फसल के तौर पर अरहर, मसूर, मूंग और मोठ की काश्त की जाती रही है। इनमें से मूंग और मोठ को यहां ज्यादा पसंद किया जाता रहा है इसीलिये इन दालों से कई प्रकार के भोज्य पदार्थों का विकास किया गया। इन अन्नों को साबुत रूप में अथवा चक्की में दलने के बाद पका कर सह–भोज्य के रूप में ग्रहण किया जाता है, लेकिन मोठ की राबड़ी का अपना अलग ही स्वाद और महत्व

होता है। ग्रीष्म ऋतु में, खासतौर पर जबकि 'लू' चले और आदमी को गर्म हवा के कारण राहत महसूस न हो, तो मोठ की राबड़ी के सेवन से काफी सुकून मिलता है। मोठ के दानों को हाथ की चक्की से पीस कर मोटे आटे के रूप में तैयार किया जाता है। तत्पश्चात इसे सांयकाल को लस्सी डालकर पकाया जाता है और ठंडा होने पर मिट्टी के पात्र में शीतल होने के लिये रख लिया जाता है। वातावरणी तापमान पर आने के बाद इस पात्र के चारों ओर या तो कोई मोटा कपड़ा लपेट लिया जाता है अथवा इसे भीगे हुए रेत में गले तक दबा दिया जाता जिससे पात्र के भीतर रखी राबड़ी काफी ठंडी हो जाये। प्रातः से लेकर दोपहर बाद तक इस पतली राबड़ी का सेवन एक पेयपदार्थ के रूप में किया जाता है। खमीरयुक्त यह भोजन गजब का सुपाच्य और पौष्टिक तत्वों से समृद्ध होता है। खमीर के कारण इसमें प्रोटीन की मात्रा में काफी वृद्धि हो जाती है। दक्षिण हरियाणा के अंचलों में बसने वाले लोग आज भी इसका भरपूर इस्तेमाल करते हैं।

उपरोक्त के अलावा हरियाणा के लोग साबूदाने को दूध के साथ उबालकर खीर बनाते हैं और चाव से खाते हैं। यहां के लोग चौलाई के दानों में गुड़ डालकर एक प्रकार का तुरत आहार बनाते हैं जो कि काफी पौष्टिक होता है। इसके अलावा मेथी और धनिया के बीजों को कूटकर इसमें खांड और घी मिलाकर भी आहार तैयार किया जाता है जिसे तुरत आहार या चिकित्सीय आहार के रूप में ग्रहण किया जाता है। लेकिन सबसे महत्वपूर्ण है गूंद–पंजीरी जिसे मुख्य तौर पर जच्चा के लिये पौष्टिक और दुग्धवृर्द्धक आहार के रूप में तैयार किया जाता है। कीकर के गोंद से कार्बोहाइड्रेस्ट्स और 'फ्रक्टोज' के रूप में मीठा प्राप्त होता है जो कि शरीर को उर्जा प्रदान करता है। गूंद–पंजीरी को तैयार करने के लिये पहले कीकर वृक्ष से गोंद प्राप्त करके उसे अच्छी तरह सुखा लिया जाता है। फिर इसे देसी घी में भून लिया जाता है। तत्पश्चात इसमें गेहूं का मोटा, भुना हुआ आटा और उपयुक्त परिमाण में घी और खांड का सम्मिश्रण किया जाता है और धीमी आंच पर काफी समय तक पकाया जाता है। इस आहार को प्रतिदिन थोड़ी मात्रा में ही खाया जाता है।

हरियाणा के मेहनती किसान कृषि योग्य कुल भूमि का ज्यादातर इस्तेमाल गेहूं, जौ धान और पशुओं का चारे के लिये इस्तेमाल किये जाने वाली ग्वार, ज्वार, बाजरा तथा मक्का जैसी फसलों के अलावा अनेक प्रकार की दलहनी फसलों और ईख की काश्त के लिये करते हैं। कुछ भू–खंडों पर बागवानी भी होती है जिससे यहां के लोगों को आहार के वास्ते अमरूद, आम, बेर और जामुन जैसे फल उपलब्ध होते हैं। शहतूत और झर–बेरी जैसे फल जंगली वनस्पतियों से प्राप्त होते हैं। इनके अलावा कैर से प्राप्त टींट फल से अचार तथा नींबू से अचार और शिकंजी बना कर सेवन कर लिया जाता है। पेय पदार्थों के वास्ते कच्चे आम को भून कर उसे पीस लिया जाता है जिससे ग्रीष्म काल में रोगनिवारक ठंडाई तैयार की जाती है। नींबूजल और आम से तैयार ठंडायी यहां के लोगों के पारंपरिक पेयपदार्थ हैं।

आधुनिक उन्नति के बावजूद हरियाणा आज भी एक कृषि–प्रधान राज्य है और देश के अन्न भंडार में गेहूं, चावल और चना की काफी मात्रा देकर योगदान देता है। यहां के ज्यादातर घरों में आज भी घरेलू महिलाएं हाथ से अन्न को प्रसंस्करित करके भोजन बनाने परंपरा का निर्वाह कर रही है। लेकिन चिंताजनक स्थिति इस बात को लेकर है कि परंपरा के रूप में विकसित तुरत और विशेष आहारों का स्थान औद्योगिक रूप से तैयार 'जंक फूड' अथवा 'फास्ट फूड' ने ले लिया है। हरियाणा के शहरी इलाकों में दूसरे प्रांतों, खासतौर पर दक्षिण भारत, के व्यंजनों को परोसने वाले होटल खुलते जा रहे हैं जिससे यहां के लोग अब जब भी घर से बाहर भोजन ग्रहण करते हैं तो इनकी ओर आकर्षित होते हैं। इस प्रकार का भोजन ज्यादातर शहरी लोग करते हैं लेकिन किसान वर्ग के लोग अभी इनसे दूर हैं। इससे लोगों की पाचन क्रिया में परिवर्तन हो रहा है और उनकी सेहत पर प्रतिकूल असर भी पड़ता देखा गया है। दूसरी बात यह है हरियाणा का पारंपरिक भोजन ऐसा है जो शारीरिक श्रम की मांग करता है। आजकल जो लोग शहरों में आ गये हैं अथवा उनका श्रम से कोई खास वास्ता नहीं रह जाता और फिर भी पारंपरिक भोजन, खासतौर पर गरिष्ठ, का सेवन करने की आदत बनाये हुए हैं जिसमें घी अथवा वसा की मात्रा ज्यादा होती है, अनेक तरह के संचारी रोगों जैसे कि आंत्रशोथ एवं गैस्ट्राइटिस और असंचारी रोगों जैसे कि हृदवाहिकीय रोग (उच्च रक्तचाप, हृदयशूल, हृदयाघात अथवा हार्टअटैक), कैंसर और मधुमेह से पीड़ित होने लगे हैं। इससे देश के

स्वास्थ्य तंत्र पर अतिरिक्त बोझ बढ रहा है। विगत में हरियाणा में उक्त प्रकार के असंचारी रोगों के बारे में कभी–कभार ही सुना जाता था।

कुछ भी हो, हरियाणा के लोग अभी तक अपने परंपरागत भोजन की किस्म और गुणवत्ता को काफी बचाये हुए हैं लेकिन पिछले कुछ समय से जिस प्रकार मौसम का मिजाज बदल रहा है और प्रदूषण में वृद्धि के साथ–साथ कृषि में संकर नस्लों, रासायनिक उर्वरकों के इस्तेमाल में बढ़ोतरी तथा हानिकारक कीड़ों, फफूंद और अन्य प्रकार के संक्रमण से बचाने के लिये संश्लेषित कीटनाशकों का प्रयोग बढ़ रहा है उससे हरियाणा की पारिस्थितिकी में भी परिवर्तन देखा गया है। इनके चलते भविष्य में हरियाणा में फसलों के लिये प्रयोग किये जाने वाली पौधों की नस्लों और फलदार पेड़ों की किस्म और सेहत पर प्रतिकूल प्रभाव का पता लगाया गया है। घास और अन्य प्रकार के पशु चारे की किस्म और गुणवत्ता में पिछले कई दशकों में परिवर्तन देखा गया है। इस तरह मनुष्य और पशुओं को मिलने वाले आहार की किस्म और गुणवत्ता में ही नहीं बल्कि इनकी बुनियाद भी खोखली होती जा रही है। इसका सीधा सा मतलब है मनुष्य और ऐसे पालतू पशु जिनसे मनुष्य अपने लिये आहार योग्य भोज्य पदार्थ प्राप्त करता है, की सुरक्षा पर बड़ा प्रश्नचिन्ह लग गया है अर्थात मनुष्य को अब अपनी 'फूड सिक्योरिटी' का भी ध्यान रखना पड़ेगा। इसके लिये सबसे बड़ा खतरा 'मोनोकल्चर' और 'जेनेटिकली मॉडिफायड क्राप्स' का हो गया है। अभी तक तो भारत सरकार यह ध्यान रखे हुए है कि 'जेनेटिकली मॉडिफायड क्राप्स एंड फूड्स' को नियंत्रित किया जाये लेकिन भविष्य की जरूरतों और दबावों को देखते हुए इससे कितने दिन तक बचा जा सकेगा, कहा नहीं जा सकता। लेकिन वैज्ञानिक अनुसंधानों से यह बात तो साबित हुई ही है कि जिन समुदायों ओर देशों के लोग अपने पारंपरिक आहार से जुड़े रहते हैं और इसकी बुनियाद अर्थात 'फूड बेस' को बचाये रखते हैं वे ही स्वस्थ और सक्षम बने रह सकते हैं।

संदर्भ :–

1. न्यूट्रीटिव वैल्यू ऑप इंडियन फूड्स, 1971, राष्ट्रीय पोषण संस्थान (भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद्), हैदराबाद
2. माइक्रोन्युट्रिएंट प्रोफाइल ऑव इंडियन पापुलेशन, 2004, भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद्, अंसारी नगर, नई दिल्ली–29